हयवदन

गिरीश करनाड

ब० व० कारंत द्वारा अनूदित*

इस नाटक का कपिल-देवदत्त वाला प्रसंग मूल वेताल पंचविंशति कथा की छठी कहानी से लिया गया है। लेकिन इसी मूल कथा को आधार बनाकर टामस मान ने जो लंबी कहानी लिखी थी, उस का भी मैं उपकृत रहा हूं। मान की कहानी में से जिन अंशों की आवश्यकता थी उनका इस नाटक में उपयोग करने की अनुमति के लिए मैं श्रीमती काव्या मान का आभार मानता हूं। होमी भाभा फ़ैलोशिप कौन्सिल के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापन करता हूं जिसकी अध्ययन-वृत्ति के फलस्वरूप यह नाटक संभव हो सका। —लेखक

पात्र

(प्रवेशानुसार)

भागवत	महाकाली
नट-१	गुड़िया-१
हयवदन	गुड़िया-२
देवदत्त	नट-२
कपिल	लड़का
पद्मिनी	

नट-१ और २ के द्वारा देवदत्त-कपिल का अभिनय भी कराया जा सकता है।

* इस नाटक को खेलने या इसका कोई अन्य उपयोग करने के पहले लेखक तथा अनुवादक की लिखित अनुमति लेना अनिवार्य है।

पूर्वार्द्ध

[मंच के बीचोबीच एक कुर्सी है, जिसपर गणेश-मुख रखा है। गणेश-वंदना हो रही है।]

गीत

नमो नमो हे गजवदन
विघ्नहरण गुण-गण-सदन।
बुद्धि विधाता, सिद्धि प्रदाता
नाटक का जो पहला श्रोता।
आज हमारी नाटक सेवा
सफल बना दे विकट देवता।

[पूजोपरांत गणेश-मुख को भीतर ले जाया जाता है।]

भागवत : जो समस्त विघ्नों का विनाश करे, जो समस्त मनोकामनाओं को सिद्ध करे, ऐसे प्रतापी भगवान विश्वेश्वर गजवदन की हम वंदना करते हैं कि आज के हमारे नाटक को आप सफलभूत बनायें। अब अपने वक्रशुंड महाकाय की महिमा का क्या बखान करें? जिनका चेहरा हो हाथी जैसा, शरीर हो मनुष्य जैसा, दाँत हो टूटा-टूटा, पेट हो फटा-फटा। जो नख से शिख तक ऐसे परिपूर्ण अपूर्णांग हों, वे आखिर किस अपूर्णता का संकेत देते हैं? और यह कैसा रहस्य है कि ऐसे अपूर्णांग प्रभु ही विघ्नहर्ता कहलायें? परंतु प्रभुलीला का कौन पार पावे! इस मंगल-मूर्ति की ऐसी विकट रचना से यही अभीष्ट होगा कि प्रभु की पूर्णता की कल्पना करना अपूर्ण मनुष्य के लिए असंभव है। अस्तु, हम जड़मति प्रभु-रहस्य को क्या बतायें? न तो यह हमारा काम है, और न हम में इतनी सामर्थ्य ही है। बस, अब चलो, प्रभु गज-मुख की वंदना करो और नाटक खेलने के लिए तैयार हो जाओ।

यह है धर्मपुरी नगर जिसके राजा हैं धर्मशील, जिनकी ख्याति और राज-सीमा दिग-दिगंत में फैली है। इसी नगर के दो युवक ही हमारे नाटक के नायक-युगल हैं। उनमें से एक का नाम है देवदत्त शर्मा। विप्रोतम पंडित विद्यासागरजी का एकमात्र पुत्र है: सुधी पंडित, विद्याधनी, कामदेव-सा सुंदर, गौरवर्ण, कोमल-कांत काया। जो प्रेम और न्याय के शास्त्रार्थों में दिग्गज पंडितों को परास्त कर चुका है, काव्य कला में बड़े-बड़े महाकवियों को नीचा दिखा चुका है। देवदत्त शर्मा, मानो धर्मपुरी में हर आँख का तारा। दूसरा है कपिल: राज शस्त्रागार का स्तंभ-पुरुष, कर्मकार लोहित का सपूत। मेघ-सा साँवला रंग, सादा-सा चेहरा-मोहरा, पर घरेलू काम-काज और शारीरिक शक्ति-सामर्थ्य में एकदम असाधारण। मुष्टि युद्ध, लटयुद्ध, बाहु-क्रीड़ा, मल्ल क्रीड़ा, अखाड़े के दाँव-पेच, कसरत-कवायद, तैराकी, उठा-बैठी, दौड़ा-दौड़ी, उछाड़-पछाड़ - हर कला में अद्वितीय।

[नेपथ्य से किसी के भय से चीखने की आवाज सुनाई देती है। पल भर के लिए भागवत विचलित होता है, दाएँ-बाएँ देखता है, फिर अपने प्रवचन में लग जाता है।]

भागवत : इन दोनों की ऐसी मित्रता थी, मानो कोई चमत्कार हो। जब भी देवदत्त-कपिल की जुगल-जोड़ी राजपथ पर चल पड़ती तो नगरवासी कहते कि राम-लक्ष्मण, कृष्ण-बलराम, लव-कुश जा रहे हैं।

[भागवत मंडली गाने लगती है।]

दो थे युवजन धर्मपुरी में,
गहरे साथी थे आपस में।
तन का मन का अटूट नाता—

[नेपथ्य से फिर चीख।]

भागवत : कौन है यह अरसिक, जो प्रारंभ में ही हमारे नाटक का रसभंग कर रहा है? (नेपथ्य में देखता है।) ओह! हमारा नट भाई भागा आ रहा है। बात क्या है?

[नट भागता आता है। डर से शरीर काँप रहा है। विक्षिप्त-सा मंच पर कूद, मंच की परिक्रमा कर भागवत से लिपट जाता है।]

नट : भागवतजी, भागवतजी!

भागवत : (छुड़ाने के प्रयत्न में) छिः छिः! क्या कर रहा है!

नट : भागवतजी, हाय, मैं मर गया, घो-घो—

भागवत : पहले मुझे छोड़ तो दे। (छुड़ाकर) हाँ, क्या हुआ? इस तरह से बिदकता क्यों है?

नट : घो-घो—बाप रे! (फिर लिपटता है।)

भागवत : छोड़, छोड़ दे मुझे—

[नट पीछे हटता है, पर कँपकपी जारी है।]

भागवत : क्या पागलपन है? सो भी सुजान रसिकों के समक्ष? रंगमंच की पवित्रता का भी तो—

नट : भूल हुई, भागवतजी, लेकिन—

भागवत : (शांत भाव से) हाँ, डरो नहीं। हम हैं, मंडली है, फिर सामने सुजान-समाज भी है, जो बीच-बीच में भले ही सो जाते हों—पर दूसरे को संकट में पाकर झट जाग जाते हैं। बताओ, क्या हुआ?

नट : (हाँफता हुआ) हाय! राम, राम! मेरी तो छाती ही फट गयी थी।

भागवत : बस बैठो, यहाँ। ब्यौरेवार सही-सही बताओ।

नट : क्या बताऊँ, भागवतजी, मैं इधर ही चला आ रहा था। देर हो गयी थी न। और ज्यादा देरी न हो, इसलिए जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ा रहा था—हाय राम! (मुँह ढाँप लेता है।)

भागवत : ठीक है, तू इधर आ रहा था, आगे?

नट : अभी तक धुकधुकी है।—हाँ, मैं इधर ही आ रहा था कि रास्ते में—बात यह थी—आज सबेरे खूब पानी पिया था—पेट फूल गया—सो सोचा कि तनिक पेट हलका करूँ, और किनारे बैठा ही था—

भागवत : नट! नट! मंच पर ऐसी वार्ता!

नट : नहीं, पहले सुनिये तो, मैंने कुछ नहीं किया था। जरा किनारे बैठकर धोती सरकायी ही थी कि बस—

भागवत : क्या हुआ?

नट : एक आवाज आयी। भारी-सी, मर्दानी आवाज: हे दुष्ट! आम रास्ते पर गंदगी फैलाते हो!

भागवत : ठीक ही तो है, तेरी समझ क्या चरने गयी थी?

नट : मैंने इधर-उधर ताका-झाँका, मगर कोई कीड़ा तक न था। सोचा, धोखा हुआ होगा। फिर रास्ते किनारे बैठ गया कि दुबारा वही दहाड़—

भागवत : क्या?

नट : क्यों रे दुष्ट! सुनता नहीं, मैं क्या कह रहा हूँ? आम रास्ते पर गंदगी फैलाना बिलकुल मना है। फिर चारों ओर देखा तो देखता ही रह गया। सामनेवाली बाड़ के पीछे खड़ा-खड़ा—

भागवत : खड़ा-खड़ा—?

नट : एक घोड़ा—

भागवत : क्या?

नट : हाँ, भागवतजी, घोड़ा। घोड़ा था, जो बोले ही जा रहा था—

भागवत : (घूरकर) प्यारे नट! सबेरे क्या चढ़ाया था?

नट : कुछ नहीं, बापू, कसम खाता हूँ। हफ़्ते भर से ताड़ीखाने की हवा तक नहीं सूँघी। और आज सबेरे तो दूध भी नहीं मिला।

भागवत : तो कहो, जो पानी पिया था शायद वही लग गया!

नट : ऐसा कुछ नहीं, भागवतजी। भगवान साक्षी है, घोड़ा खड़ा बोल रहा था।

सोचते ही शरीर थरथरा जाता है। नहीं, माँ। नहीं! कपिल चला गया—देवदत्त चला गया—अब मैं भी उनके साथ ही चलूँ। (तलवार उठाती है।) अपना सिर काट लेने की शक्ति भी मुझमें नहीं है। लेकिन, माँ, तुझे क्या? कोई कैसे भी मरे। तुझे तो एक और बलि चाहिए। ले, स्वीकार कर तीसरी बलि!

[अपने सीने पर तलवार रखती है और दोनों हाथों से तलवार की धार पर अपने सीने को दबाती है। उसी समय देवी के चित्रवाले परदे के पीछे से देवी की आवाज सुनाई पड़ती है।]

देवी : ए!

[पद्मिनी भय से सुन्न पड़ जाती है।]

देवी : रख नीचे, तलवार नीचे रख!

[पद्मिनी तलवार फेंक भय से मंदिर के बाहर दौड़ती है। लेकिन वहाँ किसी को नहीं पाती है।]

पद्मिनी : कौन है? (उत्तर नहीं। काँपती आवाज में) कौन है?

[मादलों का शोर। भय से पद्मिनी आँख-कान बंद कर लेती है। परदे के पीछे से महाकाली की पसारी हुई लाल हथेली दिखाई देती है। परदा नीचे आता है और पीछे खड़ी देवी दिखाई देती है। पसरे हाथ, खुला मुंह, देवी बड़ी भयानक लगती है। पर जैसे ही बाजे थम जाते हैं, तो लगता है देवी अंगड़ाई ले रही थी और जम्हाई ले रही थी।]

देवी : (जम्हाई की पूरी प्रक्रिया के बाद) आँखें खोल, हाँ, शीघ्र आँखें खोल—देरी मत कर!

[पद्मिनी आँखें खोल देखती है और दौड़कर चरणों में गिर पड़ती है।]

पद्मिनी : माँ! देवी!

देवी : (उनींदी आवाज में) हाँ, मैं ही हूँ। बरसों पहले यहाँ इस समय मंगल आरती होती थी। सारे भक्त मिलकर घंटा, घड़ियाल, मादल, पखावज, ताल, मंजीरा, शंख इतने जोर से बजाया करते थे कि कान फट जाते। उस भयंकर शोर से आरती की बेला मैं पूरी तौर से जागी रहती थी। पर अब न भक्त हैं न आरती। जागे रहने की आदत भी छूट गयी है। (फिर जम्हाई लेती है।) हाँ ठीक। अब तू क्या चाहती है, बता, मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हो गयी हूँ।

पद्मिनी : माँ, मुझे बचाओ—

देवी : वह तो जानती हूँ। अभी-अभी बचाया न?

पद्मिनी : हाय, माँ! इसे बचाना कहती हो तुम? अब बचकर भी कहाँ जाऊँ? कौन-सा मुंह लेकर घर लौटूं? कैसे अपना—

देवी : (कुछ चिढ़कर) हाँ, हाँ, वह सब तो पहले सुना चुकी है। दुहराने की आवश्यकता नहीं। अब जो मैं कहूँ सो कर। इन मस्तकों को उनके धड़ों पर ठीक से लगा। फिर उस तलवार से उनकी गर्दनों को दबा दे। वे दोनों तुरंत जी उठेंगे। अब तो ठीक?

पद्मिनी : माँ, तुम्हारा ही सहारा है, तुम ही साँस हो—तुम ही अन्न हो—जल—

देवी : बस, बस! जो कहा सो कर। जल्दी। मैं नींद से लड़खड़ा रही हूँ।

पद्मिनी : (हिचकती हुई) माँ, एक बात पूछूँ?

देवी : हाँ, हाँ, पर थोड़े में।

पद्मिनी : माँ, तुमसे कौन-सी बात छिपी है। भूत भविष्य-वर्तमान सब तुम्हारी हथेली पर है। तो फिर देवदत्त को तुमने क्यों नहीं रोका? कपिल को क्यों नहीं रोका? उनमें से एक को भी बचा लेतीं तो इस यातना से, इस आतंक से, मैं बच जाती। तुम क्यों चुप रहीं?

देवी : (आश्चर्य से) इस घड़ी बस यही बात सूझी तुझे?

पद्मिनी : माँ—

देवी : तेरा-जैसा माँगने वाला मैंने कभी नहीं देखा।

पद्मिनी : तुमसे कोई कुछ नहीं छिपा सकता, माँ।

देवी : यह सच है।

पद्मिनी : तो फिर तुमने उन्हें क्यों नहीं रोका?

देवी : रोकने की बात कहती है? मैं इतनी उनींदी न होती तो दोनों को निकाल बाहर करती—

पद्मिनी : क्यों, माँ?

देवी : दुष्ट कहीं के! मरते दम तक झूठ बोलते रहे। वह देवदत्त—उसने शपथ ली थी, मेरे आगे भुजाएँ और रुद्र के आगे मस्तक चढ़ायेगा। देखा! मेरे लिए बस भुजाएँ और रुद्र के लिए मस्तक! पर जब तुमने रुद्र मंदिर जाने की हठ की तो यह और कहाँ जाता? यहीं आना पड़ा। बस, अपना सिर चढ़ा दिया। ऐसा है महान भक्त देवदत्त—पाखंडी दुनिया भर का! और दूसरा वह कपिल! मेरे आगे सिर चढ़ाया, पर मरते-मरते भी मित्र-मित्र रटता रहा। एक बार भी मेरा नाम नहीं लिया। शिष्टता के नाते भी नहीं—पाजी! और पक्का झूठा! बोला, मित्रता के लिए मरता है! मित्रता के लिए! डरपोक! उसे जरूर लगा होगा कि लोग कहेंगे तेरे लिए उसने देवदत्त की हत्या की। यह डर न होता तो जरूर तेरे ऊपर अधिकार जमाता। पर राक्षस मरते दम तक 'मेरे मित्र! मेरे भाई!' चिल्लाता रहा। सच बस तू ही बोली।

पद्मिनी : सब तुम्हारी ही कृपा है, माँ।

देवी : मेरी कृपा-वृपा कुछ नहीं। तू भी स्वार्थिनी है—इसीलिए सच बोली, बस। अब बेकार की बातें छोड़। मैंने कहा वह कर। आँखें मीच कर खड़ी हो न।

पद्मिनी : जो आज्ञा माता—

[पद्मिनी हड़बड़ी और उतावली में धड़ों पर सिर लगाती है, यानी मुखौटों को चिपका देती है। पर घबराहट में मुखौटे बदल जाते हैं—देवदत्त का मुखौटा कपिल के शरीर पर और कपिल का देवदत्त के शरीर पर। गर्दनों को तलवार से दबाती है। माता के चरणों में माथा टेकती है, और फिर रंगमंच पर आगे आकर देवी की तरफ पीठ करके आँखें मीचकर खड़ी हो जाती है।]

पद्मिनी : सब कुछ कर दिया, माँ।

देवी : (जैसे हार मानकर) बेटी, सचाई की भी कोई सीमा होनी चाहिए। खैर, चलो—तथास्तु!

[फिर मादल-मृदंगों की आवाज। परदा उठाया जाता है और देवी परदे के पीछे चली जाती है। और जैसे ही आगे का दृश्य प्रारंभ होता है परदे वाले भी रंगमंच से हट जाते हैं।

पद्मिनी आँखें बंद किये खड़ी है। मादल-मृदंगों की ध्वनि थम जाती है। थोड़ी देर के लिए गहरा सन्नाटा। फिर धीमे-धीमे देवदत्त और कपिल के शरीर हिलने लगते हैं। उनकी साँसें सुनाई पड़ती हैं। वे धीरे से उठते हैं जैसे समूचा शरीर अकड़ हो गया हो। दोनों की चाल-ढाल यांत्रिक है जैसे शरीर में रक्त का प्रवाह अभी ठीक से शुरू न हुआ हो। कुछ चकराये से अपने-अपने हाथ और मुंह टटोल-टटोलकर पहचानने की कोशिश करते हैं, चारों ओर दृष्टि दौड़ाते हैं।

अब से देवदत्त के मुखौटेवाला देवदत्त और कपिल के मुखौटेवाला कपिल माना जायगा। दोनों खड़े होने की कोशिश करते हैं। बड़ी कठिनाई हो रही है, अपने को सँभाल नहीं पाते। पर जैसे-तैसे खड़े हो जाते हैं। पद्मिनी निश्चल होकर भ्रम और उत्सुकता से घड़ियां गिन रही है।]

देवदत्त : क्या—हुआ?

कपिल : क्या हुआ?

[पद्मिनी आँखें खोलती है पर उनकी ओर देखने का साहस नहीं होता।]

पद्मिनी : देवदत्त की आवाज! कपिल की आवाज! (खुशी से चीखकर) कपिल! देवदत्त!

[उत्साह से उनकी ओर बढ़ती है, पर दूसरे ही क्षण ठिठककर जड़ खड़ी रह जाती है।]

कपिल : (पद्मिनी को देखकर धीरे से) कौन?

देवदत्त : पद्मिनी?

हयवदन : नहीं, नहीं रोता। बच्चा ठीक कहता है। रोने से गला थोड़े ही फटेगा।

बच्चा : पागल, रो मत। तू हँस। हँसता है तो अच्छा लगता है—

हयवदन : **(आंसू पोंछता हुआ)** ठीक है, नहीं रोऊँगा। पर कोशिश नहीं छोड़ूंगा। आ, बच्चे। हम दोनों मिलकर 'जनगणमन' गायें।

बच्चा : मुझे नहीं आता।

भागवत : बच्चे को कौन सिखाता, हयवदन ? जंगल में पला है।

हयवदन : और कोई गीत जानते हो ? सुनो, अगर तुम कोई गीत गाओगे तो मैं तुम्हें अपनी पीठ पर बिठाकर घुमाऊँगा। मंजूर ?

बच्चा : हूँ।

हयवदन : तो गाओ। देर नहीं, चढ़ जाओ। हूँ, चढ़ जाओ मेरी पीठ पर।

[बच्चा गुड़ियों को नट के हाथ में देता है। भागवत बच्चे को घोड़े की पीठ पर बिठा देता है।]

बच्चा : **(उत्साह से)** है—है—है—

हयवदन : न, न, न, वैसे काम नहीं चलेगा। पहले गाओ, गीत आओ, तब दौड़ूंगा।

भागवत : गाओ, बेटे—

[बच्चा गाता है। हयवदन परिक्रमा करता है।]

बच्चा (गाकर) :

आया एक सवार।
जाने किस देश का बाँका सरदार
जाने क्यों उसके सीने
पर मोतिया के फूल लाल लाल हैं,
नयन बने हैं पत्थर के दाने,
देह पड़ी है ठंडी।
उजला घोड़ा दौड़ता चला
ताल-सरोवर, पहाड़ों-खेतों के पार
दिशाहीन, पथहीन।
आया एक सवार,
जाने किस देश का बाँका सरदार।

[गीत की समाप्ति पर घोड़ा भागवत के पास रुकता है।]

हयवदन : **(गंभीर होकर)** भागवतजी !

भागवत : हाँ।

हयवदन : अजीब गीत है ! इस गीत का घुड़-सवार मरा हुआ लगता है न ?

भागवत : हाँ, लगता तो है।

हयवदन : ऐसे नन्हें बालक को इतना दुखभरा गीत किसने सिखाया होगा ?

बच्चा : माँ ने सिखाया।

भागवत : गीत में क्या है, हयवदन ? सच्ची सुंदरता बच्चे की हँसी में है, जिस पर विपदा की छाया तक नहीं पड़ी है।

हयवदन : यह बात है ?

भागवत : तू ही बता, बच्चे की हँसी में जो निर्मलता है, वह और कहाँ मिलेगी ?

हयवदन : क्षमा कीजिये, भागवतजी, यह सिद्धांत मुझे कुछ जँचा नहीं। ऐसी आँसुओं में डूबी भावुकता से ही हमारा सारा भारतीय साहित्य और राष्ट्रीय जीवन भ्रष्ट हो गया है। इसी कारण हम पलायनवादी हो गये। फिर भी आप कहते हैं तो मान लेता हूँ। बच्चे, दूसरा गीत सुनाओ।

बच्चा : नहीं आता।

हयवदन : अच्छा, अच्छा। वही सुना दो। फिर एक चक्कर लगा दूंगा।

बच्चा : नहीं, पहले तुम हँसो।

हयवदन : हँसूं ? अच्छा, चलो। **(हँसने की चेष्टा करता है)** ही, ही, ही। नहीं, भाई। हुक्म पर हँसी नहीं आती। बड़ी मुश्किल है।

बच्चा : (चाबुक से मारने का अभिनय करता है) हँस—हँस—और हँस—

हयवदन : अच्छा, अच्छा ! और एक बार कोशिश करता हूँ। ही, ही, ही, ही, ही, ही, ही।

[धीरे-धीरे हँसी हिनहिनाहट बन जाती है।]

सब : अरे ! यह क्या !

भागवत : हयवदन ! हयवदन !

हयवदन : ही, ही, ही, ही—

[इंसान की बोली की जगह पूरी हिन-हिनाहट सुनाई पड़ती है। हयवदन खुशी से उछलने लगता है।]

भागवत : हयवदन, धीरे से—धीरे से—बालक को गिरा न देना।

[हयवदन हिनहिनाता हुआ मंच के चारों ओर दौड़ता है। बच्चा भी 'आया एक सवार' गाता हुआ घोड़े को उकसाता है।]

भागवत : इस तरह आखिरकार हयवदन पूर्णांग हो गया। (नटों से) तुम दोनों विप्रोत्तम विद्यासागर के पास जाओ और उन्हें समाचार दो कि उनका दिग्विजयी पौत्र एक बड़े सफ़ेद घोड़े पर सवार होकर उनके ही सम्मुख उपस्थित होने आ रहा है।

नट-२ : और ये गुड़ियाँ ?

भागवत : फेंक दो उन्हें। अब उनकी कोई जरूरत नहीं।

[नट गुड़ियाँ ले जाता है।]

भागवत : गजमुख गणेशजी की महिमा अपरंपार है, जो सबकी मनोकामना पूरी करते हैं। दादा को पोता मिला, पोते को हँसी मिली, और घोड़े को हिनहिनाहट। विघ्नेश्वर की महिमा का कौन बखान कर सकता है ? आ, हयवदन, क्षण भर के लिए अपना नृत्य रोक। और मंच के आगे आ जा। हमारा नाटक समाप्त हुआ। अब हम सब मिलकर उस परम पिता की स्तुति करें।

[हयवदन आता है। बच्चे को उतारा जाता है। चिता की रंगपटी के हटने पर कपिल, देवदत्त तथा पद्मिनी भी आगे आते हैं और सब एक पंक्ति में खड़े हो हाथ जोड़कर मंगल गीत गाते हैं]

बरसा दे हे परम कृपा मय
जग-भर में धन-धान्य संपदा।
और बढ़े साहित्य लोक में
काव्य शास्त्र का अविरत धंधा।
अब के राजा जनसाधारण
काम काज में सदा सफल हों
प्रजा राज्य के शासक जन में
अब विवेक का ही संबल हो।